रूसी कहानी

मिख़ाईल लेर्मन्तोव

आशिक़-ग़रीब

आशिक़-ग़रीब (रूसी कहानी) : मिख़ाईल लर्मन्तोव

Aashiq-Ghareeb (Russian Story) : Mikhail Lermontov

बहुत-बहुत दिन पहले की बात है। तिफ़लिस नगर में कोई एक धनी तुरुक रहता था। अल्लाह ने उसका घर ख़ूब सोने से पाट दिया था। लेकिन इस ढेर सारे सोने से भी ज़्यादा प्यारी एक चीज़ उसके पास थी। वह चीज़ थी उसकी अपनी लड़की मग़ुल-माग़री। आकाश में तारों की छवि का क्या कहना, लेकिन इन तारों की ओट में बसते हैं फ़रिश्ते, और ये फ़रिश्ते उनसे भी ज़्यादा सुन्दर होते हैं। यही बात मग़ुल-माग़री के बारे में थी। तिफ़लिस की सारी सुन्दरियाँ उसके आगे पानी भरती थीं।

तिफ़लिस नगर में ही एक लड़का भी रहता था। उसका नाम था आशिक़-ग़रीब। नंगा-बूचा ही अल्लाह ने उसे इस दुनिया में भेजा था, और नंगा-बूचा ही उसे रखा। उदात्त हृदय और गीत बनाने की प्रतिभा, इनके सिवा अल्लाह ने उसे और कुछ नहीं दिया था। वह अपना साज़, अपना रुबाब उठाता, उसकी झंकार पर तुर्किस्तान के प्राचीन वीरों के तराने गाता, ब्याह-शादियों में जाकर धनी लोगों की ख़ुशी के मौक़ों पर उनका जी बहलाता।

ब्याह-शादी के ऐसे ही एक मौक़े पर मग़ुल-माग़री को पहली बार उसने देखा था। तभी से दोनों एक-दूसरे को चाहने लगे। लेकिन मग़ुल-माग़री आशिक़-ग़रीब के लिए निर्धन का सपना थी, और उसका हृदय उतना ही उदास हो गया जितनी कि जाड़ों की रात होती है।

सो एक दिन बाग़ में अंगूर की बेल तले घास पर पड़े-पड़े उसकी आँखें झपक गयीं। संयोग की बात कि उसी समय अपनी सखी-सहेलियों के साथ मग़ुल-माग़री उधर से गुज़री। सखी-सहेलियों में एक ने देखा कि आशिक़-ग़रीब, अथवा रुबाब-वादक सो रहा है। वह ठिठककर पीछे रह गयी और उसके पास पहुँची। वह गुनगुना उठी:

"दीवाने, ओ दीवाने!
अंगूरी लता-वितान तले लम्बी ताने
क्यों पड़ा यहाँ! - उठ दीवाने!
उठ जाग देख तेरी हिरनी
तेरे समीप से गुज़र रही है अनजाने!
ओ दीवाने!"

वह चेता। नन्ही चिड़िया की भाँति लड़की फुर्र से भाग गयी। मग़ुल-माग़री ने उसे गुनगुनाते हुए सुन लिया था। वह उसे झिड़कने लगी।

लड़की ने जवाब दिया:

"ऐ काश कि तुझे पता होता, किसको वह गीत सुना आयी, तो

मुझे झिड़कने के बजाय तू लाख शुक्रिया ही देती। वह और कोई न था सजनी, वह था तेरा आशिक़-ग़रीब।"

"मुझे ले चल उसके पास।" मग़ुल-माग़री ने कहा, और वे चल दीं।

आशिक़-ग़रीब का चेहरा उदासी में डूबा था। यह देखकर मग़ुल-माग़री उसका हाल-चाल पूछने और उसे ढाढस बँधाने लगी।

"दुख का घूँट पीने के सिवा मैं और कर भी क्या सकता हूँ,"

आशिक़-ग़रीब ने उससे कहा। "मैं तुझसे प्यार करता हूँ, फिर भी तू कभी मेरी नहीं हो सकती।"

"विवाह के लिए मेरे पिता से बात करो न!" मग़ुल-माग़री ने कहा। "अपने ही ख़र्च से वह शादी कर देंगे और मुझे इतना धन देंगे जो हम दोनों की गुज़र-बसर के लिए काफ़ी होगा।"

"कहती तो तू ठीक है," उसने जबाव दिया। "अपनी लड़की की ख़ुशहाली के लिए अयाक-आग़ा कोई कोताही नहीं करेंगे। लेकिन कौन जाने आगे चलकर कहीं तेरे मन में यह गुमान पैदा न हो जाये कि मेरे पास निज का कुछ नहीं था, और जो कुछ भी है वह सब तेरी बदौलत है। नहीं, मेरी प्यारी मग़ुल-माग़री, मैंने तो अपनी रुह को एक फ़र्ज़ सौंप दिया है: मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि सात साल तक मैं दुनिया की ख़ाक छानूँगा, या तो धन-दौलत जमा करूँगा या दूर किसी जंगल में ख़त्म हो जाऊँगा। अगर तुझे यह मंजूर हो तो इस अवधि के बीत जाने पर तू मेरी

हो जायेगी।"

वह राजी हो गयी, लेकिन उसने यह ज़रूर कहा कि अगर वह नियत तिथि को नहीं लौटा तो वह कुरदूश-बे की बीवी हो जायेगी जो कि एक मुद्दत से उसकी मुहब्बत तलब कर रहा है।

आशिक़-ग़रीब अपनी माँ के पास पहुँचा। माँ से उसने आशीर्वाद लिया। अपनी छोटी बहन का उसने मुँह चूमा। कन्धे पर एक थैला डाला, हाथ में दरवेशों वाली लाठी सँभाली और तिफ़लिस नगर से चल पड़ा।

और तभी एक घुड़सवार लपकता हुआ आया। आशिक़-ग़रीब ने उस पर नज़र डाली। देखा, यह तो कुरदूश-बे है।

"दुआ है कि तुम्हारी यात्रा मज़े से बीते," ‘बे’ ने दूर से ही चिल्लाकर कहा। "चाहे जो भी तेरी मंज़िल हो मुसाफ़िर, मैं तुम्हारा साथ दूँगा।"

आशिक़ ऐसा साथी पाकर कोई ज़्यादा ख़ुश नहीं हुआ, लेकिन वह करता भी क्या, लाचार था। बहुत समय तक दोनों साथ-साथ चलते रहे, अन्त में ऐसी जगह पहुँचे जहाँ एक नदी उनका रास्ता काटती थी। नदी के उस पार जाने के लिए न तो वहाँ कोई पुल था, और न नदी की धार ही कहीं इतनी छिछली थी जहाँ उसे पैदल पार किया जा सके।

"तैरकर पहले तुम इसे पार करो," कुरदूश-बे ने कहा, "और पीछे-पीछे मैं भी आता हूँ।"

आशिक़-ग़रीब ने अपने कपड़े उतारकर अलग फेंक दिये और तैर चला। पार पहुँचने पर उसने मुड़कर जो देखा तो चिल्ला उठा, "ऐ अल्लाह, यह कैसी मुसीबत है!"

उसने देखा कि कुरदूश-बे उसके कपड़ों को समेटकर तिफ़लिस की ओर लपका जा रहा है। उड़ती धूल की एक हवाई लीक के सिवा उसके पीछे और कुछ नज़र नहीं आता था। ऐसा मालूम होता था मानो कोई साँप समतल भूमि पर सरसराता हुआ भागा जा रहा हो।

कुरदूश-बे ने तिफ़लिस पहुँचकर ही अपना घोड़ा रोका, और आशिक़-ग़रीब के कपड़े लिये उसकी माँ के पास पहुँचा। बोला:

"तेरा बेटा एक गहरी नदी में डूबकर मर गया है। ये रहे उसके कपड़े।" माँ पर दुख का ऐसा पहाड़ टूटा कि कहा नहीं जाता। वह अपने बेटे के कपड़ों पर गिर पड़ी और फफोले डालने वाले गरम-गरम आँसू बहाने लगी। इसके बाद आशिक़ के कपड़ों को लेकर वह अपनी भावी पुत्र-वधू के पास पहुँची।

"मेरा लड़का डूबकर मर गया," उसने कहा। "उसके ये कपड़े कुरदूश-बे लौटा लाया है। तुझे अब पूरी छूट है।"

मग़ुल-माग़री मुस्कुरायी।

"तुम भी कैसी बात पर यक़ीन करती हो?" उसने जवाब दिया। "यह सब कुरदूश-बे की मनगढ़न्त है। जब तक सात साल पूरे नहीं हो जाते, मैं किसी को भी अपना पति नहीं बना सकती।"

यह कहकर दीवार पर लटकी बाँसुरी उतार, कोमल स्वरों में आशिक़-ग़रीब के प्रिय गीत की धुन बजाने लगी।

इधर हमारा मुसाफ़िर, नंगे पाँव और नंगे बदन, एक गाँव में पहुँचा। गाँव के भले लोगों ने उसे कपड़े दिये, खाना दिया। बदले में, उनकी मेहरबानी का ऋण चुकाने के लिए, उसने उन्हें कुछ जादू भरे गीत सुनाये। इस प्रकार वह एक गाँव से दूसरे गाँव, एक नगर से दूसरे नगर, आगे बढ़ता गया, और दूर-दूर तक उसका नाम फैल गया।

अन्त में, घूमते-घूमते, वह ख़लाफ़ नगर में पहुँचा। सदा की भाँति एक कहवाख़ाने में उसने पैर रखा, और साज़ माँगकर गाना शुरू कर दिया।

संयोग की बात, ख़लाफ़ नगर में उन दिनों कोई पाशा राज करता था। वह गायकों का बहुत शौक़ीन था। उसके पहले कितने ही गायक उसके सामने आये, लेकिन उसके मन कोई न चढ़ा। उसके नौकर गायकों की खोज में सारे नगर की धूल छानते-छानते थक चुके थे। तभी अचानक कहवाख़ाने के पास से गुज़रते समय उनके कानों में एक जादू-भरी आवाज़ सुनायी दी। लपककर वे भीतर पहुँचे।

"चल हमारे साथ हमारे पाशा के पास," उन्होंने चिल्लाकर कहा। "नहीं तो, इंकार करने पर तुझे अपने सिर से हाथ धोना पड़ेगा।"

"मैं ठहरा आज़ाद आदमी। तिफ़्लिस मेरा घर है और मुसाफ़िरी

मेरा रोज़मर्रा," उसने उन्हें बताया। "जी करेगा तो जाऊँगा, नहीं तो नहीं। गाता ज़रूर हूँ, पर तभी जब जी में आता है। और तुम्हारा पाशा मेरा कोई मालिक नहीं होता।"

लेकिन, इस सबके बावजूद, उन्होंने ज़बरदस्ती उसे पकड़ लिया और पाशा के सामने ले गये। पाशा ने माँग की:

"गाओ!"

आशिक़-ग़रीब ने गाना शुरु किया। और उसका यह गीत क्या था, मग़ुल-माग़री के रुप का तराना था। गर्वीले पाशा को गीत इतना पसन्द आया कि उसने आशिक़-ग़रीब को अपने दरबार में रख लिया। सोने और चाँदी की उस पर वर्षा हुई, एक-से-एक बढ़िया और लक़दक़ कपड़ों से वह सज गया। ख़ुशी से भरा और रंगीन जीवन अब वह बिताता, ऐशो-इशरत में गोते लगाता। मग़ुल-माग़री को वह भूल गया था या नहीं, यह तो बन्दे को नहीं मालूम, लेकिन इन्तज़ार की नियत अवधि खिसकी जा रही थी। सात में से आख़िरी साल जल्द ही ख़त्म होने वाला था, लेकिन यहाँ से विदा होने की अभी तक उसे कोई सुध नहीं थी।

इसी समय चालीस ऊँटों और अस्सी ग़ुलामों का कारवाँ लेकर कोई सौदागर तिफ़लिस से रवाना होने वाला था। सो मग़ुल-माग़री ने उसे अपने पास बुलाया। उसे सोने का तश्त दिया और कहा:

"इस तश्त को अपने साथ लेते जाओ। जिस नगर में भी पहुँचो, अपने सामान के साथ इसे अच्छी जगह पर सजाकर रखना। और

यह बात अच्छी तरह फैला देना कि जो कोई अपने-आपको इस तश्त का मालिक साबित करेगा, उसे यह तश्त ही नहीं बल्कि साथ में उसके वज़न के बराबर सोना और दिया जायेगा।"

सौदागर चल दिया। जिस जगह भी पड़ाव डालता, मग़ुल-माग़री ने जो काम सौंपा था, उसे करता। लेकिन ऐसा कोई न मिला जो सोने के तश्त का मालिक होना मंजूर करता और अपने इस दावे को साबित करता। सो न तो किसी ने वह तश्त हासिल किया, न ही उसके वज़न के बराबर सोना। सौदागर का सब सामान क़रीब-क़रीब बिक चुका था। बचे-खुचे सामान के साथ वह ख़लाफ़ नगर में पहुँचा और मग़ुल-माग़री की शर्तों को समूचे नगर में फैला दिया। आशिक़-ग़रीब ने भी इस बारे में सुना, भागकर उस कारवाँ सराय में पहुँचा जहाँ तिफ़लिस का सौदागर टिका था, और सौदागर की दुकान पर सजे सोने के तश्त को देखा।

"यह मेरा है," उसने कहा और तश्त को अपने हाथों में दबोच लिया।

"बेशक, तेरा ही है," सौदागर ने कहा। "कारण कि मैंने तुझे पहचान लिया है, आशिक़-ग़रीब। अब जल्दी-से-जल्दी तिफ़लिस पहुँचो। मग़ुल-माग़री ने तुझे यह कहा था कि नियत अवधि ख़त्म हो रही है, और अगर तुम ठीक समय पर वहाँ मौजूद न हुए तो वह दूसरे से शादी कर लेगी।"

आशिक़-ग़रीब ने निराशा से अपना सिर पकड़ लिया। उसके

भाग्य का फ़ैसला करने वाली घड़ी में ले-देकर अब तीन दिन रह गये थे। फिर भी एक घोड़े पर वह सवार हुआ, साथ में एक थैली ली जिसमें सोने के सिक्के भरे थे, और घोड़े की जान की परवाह न कर भरपूर तेज़ी से उसे दौड़ा दिया। आख़िर वही हुआ जो होना था। उसके घोड़े ने ठोकर खायी और बदहवास होकर अर्ज़नीन और अर्ज़रुम के बीच अर्ज़ईग़न के पहाड़ों में ढेर हो गया। अब वह क्या करे? अर्ज़नीन से तिफ़लिस तक घोड़े पर तीस दिन का रास्ता है, लेकिन वह था कि उसके पास कुल मिलाकर दो दिन से ज़्यादा समय नहीं था।

"अल्लाहो क़ादिर-मुतलक़!(हे सर्वशक्तिमान परमात्मा!)" वह चीख़ उठा। "अगर तूने इस समय मेरी सहायता न की तो इस दुनिया में सिवा अन्धकार के मेरे लिए और कुछ नहीं रह जायेगा।"

और वह एक चट्टान से कूदने के लिए आगे बढ़ा। तभी, अकस्मात उसकी नज़र नीचे सफ़ेद घोड़े पर सवार एक आदमी पर पड़ी, और उसने सुना:

"ऐ उग़लान (युवक), यह क्या करता है तू?"

"मैं मरना चाहता हूँ," आशिक़ ने जवाब दिया।

"अगर ऐसा ही है तो नीचे आ। मैं ख़ुद तेरा काम तमाम कर दूँगा।"

आशिक़-ग़रीब, जैसे-तैसे, ढलुवान पर से रेंगता हुआ नीचे

पहुँचा।

"मेरे पीछे-पीछे चला आ," घुड़सवार ने भयावनी आवाज़ में कहा।

"लेकिन मैं तेरे पीछे-पीछे कैसे चल सकता हूँ," आशिक़ ने कहा। "तेरा घोड़ा हवा की रफ़्तार से चलता है, और मैं थैले के बोझ से दबा हूँ।"

"सच कहता है तू! अपना थैला मेरी काठी से लटका दे और ख़ुद पीछे-पीछे चला आ।"

लेकिन आशिक़-ग़रीब पूरे कस-बल के साथ दौड़ लगाने पर भी पिछड़ा ही रहा।

"अरे यह क्या, तू पिछड़ क्यों रहा है?" घुड़सवार ने पूछा ।

"लेकिन मैं तेरा साथ दे भी कैसे सकता हूँ? तेरे घोड़े की चाल मन के वेग से भी ज़्यादा तेज़ है, और मैं थककर चूर-चूर हो गया हूँ।"

"सच कहता है तू! ऐसा कर, मेरे पीछे घोड़े पर सवार हो जा, और एकदम सच-सच बता कि तुझे जाना कहाँ है?"

"ओह, किसी तरह अर्ज़रूम पहुँच जाऊँ यही मेरे लिए बहुत बड़ी बात होगी," आशिक़-ग़रीब ने जवाब दिया।

"अच्छा तो अपनी आँखें बन्द कर ले।"

आशिक़-ग़रीब ने अपनी आँखें बन्द कर लीं।

"अब आँखें खोल ले," घुड़सवार ने कहा।

आशिक़-ग़रीब ने आँखें खोलीं और देखा: सामने अर्ज़रुम की सफ़ेद दीवारें नज़र आ रही थीं, और उसकी मीनारें चमचमा रही थीं।

"मुझसे कसूर हुआ आग़ा (बड़े भाई साहब)," आशिक़ ने कहा। "मैंने ग़लती की। असल में मुझे कार्स जाना था।"

"निकली न वही बात," घुड़सवार ने कहा। "मैंने तुझे पहले ही चेता दिया था कि एकदम सच-सच बताना। जो हो, अपनी आँखें बन्द कर ले... हाँ, अब खोल ले।"

आशिक़-ग़रीब को ख़ुद अपनी चेतना पर, और इस बात पर कि वह अपनी आँखों के सामने कार्स को ही देख रहा है, यक़ीन नहीं हुआ। घुटनों के बल गिरकर बोला:

"कसूर हुआ आग़ा, तेरे इस आशिक़-ग़रीब से तिहरा गुनाह हुआ। लेकिन तू तो जानता ही है कि जो आदमी सुबह-सवेरे झूठ बोलने का मन्सूबा बाँधता है, उसे साँझ को भी झूठ बोलना पड़ता है। सच तो यह है कि मुझे तिफ़लिस पहुँचना है।"

"तू भी कैसा झूठा है!" घुड़सवार ने झुँझलाकर कहा। "लेकिन किया भी क्या जाये, सो मैं तुझे माफ़ करता हूँ। हाँ तो अपनी आँखें बन्द कर ले... अब खोल," एक मिनट रुककर उसने कहा।

आशिक़ ख़ुशी के मारे चीख़ उठा। वे अब तिफ़सिल के दरवाज़े

पर खड़े थे।

सच्चे दिल से आशिक़ ने शुक्रिया अदा किया, और काठी पर से अपना थैला उतारते हुए घुड़सवार से बोला:

"तेरा करतब महान है, आग़ा। लेकिन मेरे लिए उससे भी महान एक काम और कर दे। अगर मैं किसी से यह कहूँगा कि अर्ज़नीन से तिफ़लिस तक का रास्ता एक दिन में मैंने पार किया है तो कोई मेरा यक़ीन नहीं करेगा। सो मुझे कोई ऐसी चीज़ दे जिससे मैं यह साबित कर सकूँ।"

घुड़सवार ने मुस्कुराकर कहा:

"झुककर मेरे घोड़े के खुर तले की मिट्टी मुट्ठी-भर उठा ले, और उसे अपने लबादे तले दामन में छिपा रख। अगर कोई तेरे शब्दों की सच्चाई पर शक करे तो उससे कहकर ऐसी अन्धी को बुलवा ले जिसे सात साल से कुछ भी सूझता न हो, उसकी आँखों पर इस मिट्टी का लेप कर दे, और वह देखने लगेगी।"

आशिक़-ग़रीब ने सफ़ेद घोड़े के खुर तले की मिट्टी एक मुट्ठी उठा ली।

लेकिन जैसे ही उसने सिर उठाया तो देखा कि घुड़सवार और उसका घोड़ा दोनों ही ग़ायब हैं। तब उसे पक्का यक़ीन हो गया कि उसका रक्षक हैदर इलियास या जौरों (काफ़िरों) के शब्दों में सन्त जार्ज के सिवा और कोई न था।

काफ़ी रात बीतने के बाद ही आशिक़-ग़रीब अपने घर पहुँच

सका। काँपते हाथों से उसने दरवाज़ा खटखटाया। साथ ही अपनी अन्ना को, माँ को, आवाज़ दी:

"अन्ना, अन्ना, दरवाज़ा खोल। मैं एक पाहुना हूँ। ख़ुदा ने तेरे दरवाज़े पर मुझे भेजा है। भूख और पाले के मारे बेहाल हूँ। रहम कर, अपने मुसाफ़िर बेटे के नाम पर मुझे अन्दर आने दे।"

जवाब में बुढ़िया की कमज़ोर आवाज़ आयी:

"राहगीरों को शरण देने के लिए अमीरों और क़दीरों(शक्तिवानों) के घर मौजूद हैं। सारे नगर में ब्याह-शादियाँ हो रही हैं। तू वहीं जा। वहाँ तेरी रात मज़े में गुज़र जायेगी।"

"अन्ना," उसने जवाब में कहा, "यहाँ मैं किसी को नहीं जानता, इसलिए तुझी से फिर विनती करता हूँ। अपने मुसाफ़िर बेटे के नाम पर मुझे अन्दर आने दे।"

इस पर उसकी बहन ने माँ से कहा:

"मैं उठती हूँ, माँ, और उसके लिए दरवाज़ा खोल देती हूँ।"

"नाकारा लड़की," माँ ने कहा, "युवक लोगों को देखते ही तेरी लार टपकने लगती है और तू ख़ूब उनकी आवभगत करती है। मुझे तो कुछ दिखायी देता नहीं। इतने आँसू मैंने बहाये हैं कि सात साल से मुझे कुछ दिखायी नहीं देता।"

माँ झिड़कियाँ देती ही रही और लड़की ने उठकर आशिक़-ग़रीब के लिए दरवाज़ा खोल दिया। रस्मी दुआ-सलाम के बाद वह बैठ गया और हृदय में भावनाओं का अम्बार छिपाये अपने चारों

ओर देखने लगा। मधुर आवाज़ देने वाले अपने साज़ पर उसकी नज़र पड़ी जो दीवार पर लटका था। साज़ के ऊपर धूल की तह-पर-तह चढ़ी थी। उसने अब अपनी माँ को कुरेदना शुरू किया: "वह दीवार पर क्या लटका है?"

"तू भी कैसा मीनमेखी मेहमान है!" उसने जवाब दिया। "बस इतना ही ग़नीमत समझ कि तुझे एकाध रोटी मिल जायेगी और अल्लाह का नाम लेकर सुबह ही तुझे यहाँ से विदा कर दिया जायेगा।"

उसने जवाब में कहा:

"मैं तुझे पहले ही बता चुका हूँ कि तू मेरी अपनी माँ है और यह मेरी बहन है, और इसीलिए मैं तुझसे यह जानना चाहता हूँ कि दीवार पर वह क्या लटका हुआ है।"

"यह साज़ है, साज़!" उसकी बात का यक़ीन न करके बुढ़िया ने झुँझलाकर जवाब दिया।

"साज़? - साज़ से तेरा क्या मतलब है?"

"गाना गाते समय इसे बजाया जाता है।"

इस पर आशिक़-ग़रीब बुढ़िया के पीछे पड़ गया और कहने लगा कि बहन उसे साज़ उतारकर दिखा दे। बुढ़िया ने जवाब दिया:

"भला यह कैसे हो सकता है? यह साज़ मेरे दुखियारे बेटे का है, और लम्बे-लम्बे सात साल से यहीं दीवार पर लटका है। किसी भी जीवित आदमी ने इसे अपने हाथ से नहीं छुआ।"

लेकिन उसकी बहन उठी, और दीवार से साज़ को उतारकर उसे दे दिया।

इसके बाद आकाश की ओर उसने अपनी आँखें उठायीं और दुआ के ये शब्द उसके मुँह से निकले:

"अल्लाहो-क़ादिर-मुतलक़, अगर मेरे भाग्य में अपने मन की इच्छा पूरी करना बदा है तो तू ऐसा कर कि मेरा यह सात तारों वाला साज़ ठीक उन्हीं स्वरों में झंकार उठे जिन स्वरों में कि सात साल पहले आख़िरी बार मैंने इसे बजाया था।"

और उसने ताँबे के तारों को छेड़ा। तारों से संवादी स्वरों में झंकार प्रकट हुई और उसने गाना शुरू किया:

"मैं आशिक़-ग़रीब हूँ - 'ग़रीब' यानी मुसाफ़िर, और पाँवों में मेरे सनीचर है, और निर्बल हैं मेरे बोल। फिर भी हैदर इलियास ने ऊँची और गहरी चोटी पर से उतरने में मुझे मदद दी। माना कि मैं ग़रीब हूँ, और निर्बल हैं मेरे बोल, फिर भी मुझे - घर से निकले अपने बेटे को - पहचानो मेरी माँ!"

उस पर माँ की आँखों से आँसू फूट पड़े और वह बोली:

"तुम्हारा नाम क्या है?"

"रशीद,(सरल हृदय)" उसने जवाब दिया।

"तू तो अपनी कह चुका, अब मेरी भी सुन, रशीद!" बुढ़िया ने कहा।

"अपनी बातों से तूने मेरे हृदय को छलनी-छलनी कर दिया है।

इसी रात मैंने सपने में देखा - मेरी आँखें अब सपनों में ही देख पाती हैं - कि मेरे बाल एकदम सफ़ेद हो गये हैं। आँसुओं ने सात साल से मुझे अन्धी बना दिया है। तेरी आवाज़ उसकी आवाज़ से मिलती है, सो तू ही बता कि मेरा बेटा कब लौटेगा?"

और आँसू बहाते हुए, उसने यह बात एक बार फिर दोहरायी। आशिक़ ने बहुतेरा बताया कि वही उसका बेटा है, लेकिन बेकार। बुढ़िया ने यक़ीन नहीं किया। कुछ मिनट तक रुकने के बाद, उसने विनती की:

"मेरी अच्छी माँ, कम से कम इतना तो कर कि यह साज़ मुझे दे दे कि इसे लेकर ज़रा मैं अपना नसीब आज़मा सकूँ। पास ही मैंने सुना है, एक शादी हो रही है। मेरी बहन मुझे वहाँ का रास्ता दिखा देगी। वहाँ मैं गाऊँगा-बजाऊँगा, और जो कुछ मिलेगा, उसमें तुम दोनों का भी साझा रहेगा।"

"नहीं, यह मैं नहीं मान सकती," बुढ़िया ने जवाब दिया। "जब से मेरा लड़का गया है, यह साज़ कभी घर से बाहर नहीं हुआ।"

लेकिन उसने क़समें खानी शुरु कीं कि वह साज़ का एक भी तार इधर-उधर नहीं होने देगा।

"अगर एक भी तार टूट गया," उसने ज़ोर देकर कहा, "तो मैं अपने सारे माल-मता के साथ इसके लिए ज़िम्मेदार होऊँगा।"

सो बुढ़िया ने उसकी थैली को टटोला और यह जानकर कि वह सिक्कों से भरी है, उसे साज़ ले जाने की इजाज़त दे दी। बहन ने

उसे रास्ता दिखाया और उस धनी घर में, जहाँ धूमधाम से शादी की दावत हो रही थी, उसे छोड़कर ख़ुद बाहर दरवाज़े पर खड़ी हो गयी। वह देखना चाहती थी कि अब आगे क्या होता है।

मग़ुल-माग़री इसी घर में रहती थी और ठीक इसी रात वह कुरदूश-बे की पत्नी बनने वाली थी। कुरदूश-बे अपने सगे-सम्बन्धियों और संगी-साथियों के साथ खान-पान में मस्त था और मग़ुल-माग़री बढ़िया कामदार चतरे (पर्दे) के पीछे अपनी सखी-सहेलियों के साथ बैठी थी। उसके एक हाथ में ज़हर भरा प्याला था और दूसरे में तेज़ खंजर: उसने क़सम खायी थी कि कुरदूश-बे के पलंग पर पाँव रखने से पहले ही वह अपना काम-तमाम कर लेगी।

तभी चतरे की ओट में उसने सुना कि कोई अजनबी आया है। वह कह रहा था:

"सलाम अलैकुम। ख़ुदा तुम्हें राहत दे। तुम यहाँ दावत उड़ा रहे हो और ख़ुशियाँ मना रहे हो। मैं एक ग़रीब (परदेशी) राहगीर हूँ। मुझे भी यहाँ बैठने की इजाज़त दो। मैं तुम्हें गीत सुनाकर ख़ुश कर दूँगा।"

"क्यों नहीं," कुरदूश-बे ने कहा। "यह शादी का मौक़ा है। गाने और नाचने वालों को भला कौन मना करेगा। सो तू भी कुछ सुना, आशिक़, मैं तुझे अंजली-भर सोना देकर विदा करूँगा।"

इसके बाद कुरदूश-बे ने आशिक़-ग़रीब से पूछा:

"तेरा नाम क्या है, राहगीर?"

"शिन्दी ग़रूरसज़!"

"वल्लाह, क्या नाम है!" बे हँसी का फ़व्वारा छोड़ते हुए चिल्ला उठा।

"ऐसा नाम तो मैंने पहली बार ही सुना है।"

"जन्म से पहले जब मेरी माँ के पेट में पीड़ा शुरू हुई तो पड़ोसी दरवाज़े पर आते और पूछते - अल्लाह ने क्या दिया है, लड़का या लड़की? और उन सबको एक ही जवाब मिलता - 'शिन्दी ग़रूरसज़' (तुम्हें जल्दी ही पता चल जायेगा)।"

इसके बाद उसने अपना साज़ उठाया और गाना शुरू कर दिया:

"ख़लाफ़ नगर में मैंने मिसरी मदिरा का जाम पिया, पर ख़ुदा ने मुझे पर दिये और तीन दिन में उड़कर मैं यहाँ आ गया।"

कुरदूश-बे के भाई के दिमाग़ में बुद्धि की जगह गोबर भरा था। उसने अपना खंजर निकाल लिया और चिल्लाकर बोला:

"तू झूठ बोलता है! ख़लाफ़ से यहाँ तक कोई तीन दिन में कैसे आ सकता है?"

"लेकिन तूने यह खंजर क्यों निकाल लिया है?" आशिक़-ग़रीब ने कहा। "गायकों के लिए यह एक आम बात है कि वे दुनिया के चारों कोनों से एक ही जगह पर जमा होते हैं। फिर मैं अपने गीत के लिए तुझसे कुछ वसूल भी नहीं कर रहा हूँ। चाहे यक़ीन कर चाहे न कर। यह तो तेरी मर्ज़ी है।" "गाने में बाधा न दे,"

दूसरे ने कहा और आशिक़-ग़रीब ने फिर से गाना शुरू कर दिया:

"अर्ज़नीन घाटी में मैंने नमाज़े-पेशी (सुबह की पहली नमाज़) पढ़ी, दोपहर की अर्ज़रूम नगर में, मग़रिब की (सूर्यास्त की) कार्स नगर और साँझ की तिफ़लिस में। अल्लाह ने मुझे पर दिये, और मैं उड़कर यहाँ आ पहुँचा। अगर मैं झूठ बोलता हूँ तो ख़ुदा करे कि मैं सफ़ेद घोड़े तले ग़ारत हो जाऊँ। वह चलता क्या था, तेज़ छलाँगें मारता था, तने हुए रस्से पर नृत्य करने वाले नट की भाँति पहाड़ से घाटी में, घाटी से पहाड़ पर। मिवलैन ने, हम सबके परवरदिगार ने, आशिक़ को पर बख़्शे, और वह उड़कर मग़ुल-माग़री की शादी में आ पहुँचा।"

इस पर मग़ुल-माग़री ने, उसकी आवाज़ पहचानकर, ज़हर के प्याले को एक ओर फेंक दिया, और खंजर को दूसरी ओर।

"अच्छा तो क्या इसी तरह तू अपनी क़सम रखती है?" उसकी एक सहेली ने कहा। "इसका मतलब यह कि तूने आज की रात कुरदूश-बे की बनना तय कर लिया है!"

"तू नहीं पहचान सकी, लेकिन मैंने उस आवाज़ को पहचान लिया जो मुझे इतनी प्यारी है," मग़ुल-माग़री ने जवाब दिया और कैंची से चतरा को काटकर एक झरोखा-सा बना दिया। और जब उसने आशिक़-ग़रीब के चेहरे पर नज़र डाली और उसे पक्की तौर पर पहचान लिया तो उसके मुँह से एक चीख़ निकली। भागी-भागी वह उसके पास पहुँची और उसकी गरदन में अपनी बाँहें डाल दीं। इसके बाद दोनों बेसुध होकर गिर पड़े।

कुरदूश-बे का भाई खंजर ताने उन पर टूट पड़ा। वह दोनों को मार डालना चाहता था। लेकिन कुरदूश-बे ने उसे रोकते हुए कहा:

"ग़ुस्सा ठण्डा कर और याद रख कि जन्म के समय इन्सान के भाग्य में जो कुछ लिख दिया जाता है, उससे कभी छुटकारा नहीं मिलता।"

होश आने पर मग़ुल-माग़री लाज के मारे लाल हो गयी, हाथों से उसने अपना मुँह छिपा लिया और पर्दे के पीछे ओझल हो गयी।

"अब, बिला शक, हर कोई देख सकता है कि तू आशिक़-ग़रीब है," दूल्हे ने कहा, "लेकिन यह तो बता कि इतने थोड़े समय में इतने बड़े रास्ते को तूने पार कैसे किया?"

"सच्चाई के सबूत में," आशिक़-ग़रीब ने कहा, "मेरी तलवार चट्टान को भी काट डालेगी। और अगर मैं झूठा हूँ तो ख़ुदा करे मेरी गरदन बाल से भी ज़्यादा पतली हो जाये। लेकिन, सबसे अच्छा तो यह है कि मेरे सामने किसी ऐसी अन्धी को ला जिसने सात साल से सूरज की रोशनी न देखी हो, और मैं उसकी आँखों की जोत लौटा दूँगा।"

आशिक़-ग़रीब की बहन, जो बाहर दरवाज़े के पास खड़ी थी, यह सुनते ही भागी हुई अपनी माँ के पास गयी।

"माँ," उसने चिल्लाकर कहा, "वह सचमुच मेरा भाई और दरअसल तेरा बेटा आशिक़-ग़रीब है।"

इसके बाद वह अपनी माँ का हाथ पकड़कर उसे वहाँ ले आयी जहाँ दावत हो रही थी। आशिक़-ग़रीब ने अपने लबादे के भीतर से वह मिट्टी निकाली, उसे पानी में घोलकर अपनी माँ की आँखों पर लेप दिया और लेपते हुए बोला: "तुम सब लोगों के सामने अब यह ज़ाहिर हो जायेगा कि हैदर इलियास कितना महान है और क़ादिर है।"

मिट्टी लेपते ही उसकी माँ ने आँखें खोलीं और देखा कि उसकी आँखों की जोत लौट आयी है। इसके बाद किसी के हृदय में उसके सच्चा होने में सन्देह नहीं रहा, और कुरदूश-बे ने मग़ुल-माग़री को, जिसके सौन्दर्य का बखान करना मुश्किल है, अपने दावे से मुक्त कर दिया।

इस पर ख़ुशी से छलछलाते आशिक़-ग़रीब ने उससे कहा:

"सुनो कुरदूश-बे, मैं तेरी भी तसल्ली करूँगा। मेरी बहन उस दुल्हन से किसी तरह भी घटकर नहीं है जिससे कि तेरा ब्याह होने वाला था। मैं अब अमीर हूँ, सो वह भी चाँदी-सोने से उतनी ही लदी होगी जितनी कि मग़ुल-माग़री। सो तू उसे स्वीकार कर - और ख़ुदा तुम दोनों को भी उतनी ही ख़ुशी दे जितनी कि मुझे अपनी मग़ुल-माग़री को पाकर हुई है।"

(अनुवाद नरोत्तम नागर)